मत्प्रिय योगी,

उमा वासुदेव के लेख से अनेक सहजयोगीयोंको बड़ा दुःख हुआ और मेरेपास बहुत से पत्र आये है। हो सकता है तुम्हे भी कुछ पत्र मिले हो। इसलिये मैं आज तुम्हे पत्र लिख रही हूँ। हो सकता है कुछ लोग तुमसे भी नाराज़ हो। हालाकि मैं सोचती हूँ कि एकबात मेरेलिये लाभदायी है। इसलिये इस लेखकी और नज़रकी तुम तो जानते हो कि पैर छूनेसे मैं कितना भागती हूँ। सहजयोगी छोड़कर और किसीको पैर छूने का अधिकार आपलोग क्यों दे देते हैं? मैं मानती हूँ कि कुछ लोग पैरपर बार छूते है। फिर भी अधिकतर तो कहलाये हि होते है। अंहकारी लोगोंसे तो ऐसे हि बचत हो जाती है कारण अधिकतर वे पैर छूने का कुछ नहि लेते। नहि तो न जाने इन पैरोंका क्या हाल होगा। बेचारे एकदम जल भुन जाते। इस लेख से जनसाधारण मेरे पैर छूना बंद कर दे तो उमाजी के उपकार मानने चाहिये लेकिन उन्हे स्वंय को बहुत समझदार नहि समझना चाहिये और दूसरोंको अपमानना। क्या उमाजी सबकी मनोकामना जानती है? संसारमें सबलोग equal है किन्तु similar तो नहि है। सबको अधिकार है अपने आत्माको पाये और उसके प्रकाश मे विकसित हो। किन्तु गर सहजयोगी अपने अनुभव और प्रचिती के दमपर हो उस प्रकाश का स्त्रोत मानते है तो उमाजी जो कि इस प्रांगण मे एकदम अपरिचित है उन्हे चापलुस आदि असभ्य शब्दोंसे अपमानित नहि कर सकती। वैसे तो सभी वार्ताहारी समझते है कि वे जो चाहे किसी के लिये कह सकते है। हां मेरेबारे मे वे चाहे कुछ भी कहती किन्तु सारे सहजयोगी समाज के बारेमे कहना उनकेलिये अनुचित है। कारण इन्होने मुझे जानना चाहा था। सो तो मुश्किल हि है। इसीलिये मैं कहती हूँ कि इन लोगोंसे चुनौती लेना व्यर्थ है। हां मराठी पत्रिकाओंके संवाद

ध्यान गहन और प्रगल्भ है। इनका शास्त्रज्ञान
वास्तविकता (Reality) के किनारे छू सकता है।
एक तो महाराष्ट्र संतो की भूमि है और दूसरे अधिकतर
शिक्षित व्यक्ति। धर्मरत है। पर ऐसा कहनेपर लोग
यह कह सकते हैं कि यह मेरे संकिर्णता का लक्षण है।
कारण मैं महाराष्ट्र मे पैदा हुई हूँ। किन्तु उत्तर भारतमे
तो कोई कुंडलिनी के बारेमे जानता नही हालांकि
गुरु नानक, कबीर सबने इसे 'सुरती' कहा है और इसका
बखान किया है। बिहार मे जहाँ कबीर ने इतनी
मेहनत की लोगबाग 'सुरती' तंबाखूको कहते है।
बड़े बड़े विद्वानोने कबीर का खंडन हि किया है।
इनकी भाषा को सधुक्कड़ी आदि असभ्य शब्दोंसे
वर्णन किया है। जो योगी करते हुये है इन्होने इसीलिये
छायावाद ई. शैली का आलंबन किया है। किन्तु मराठी
साहित्यमे (साहित्य) 'हित' खोलकर कहा गया है जिसकी
सबने प्रशंसा की है और जिसके कारण शुद्ध श्रद्धा जन-
साधारण मे तथा विद्वानो मे जागृत है। [illegible] अंधविश्वास
अधिकतर अहंकारी या रूढीग्रस्तो मे पनपता है न कि शुद्ध श्रद्धा।
इसीप्रकार दक्षिण के सभी भाषाओमे 'संतो की पहचान' प्रचुर
मात्राओमे पायी जाती है। इसलिये दक्षिणमे भारतीय संस्कृती पनपी है
और उत्तर मे खोखलीहुई जारही है।
यह लेखन भी इसी पार्श्वभूमि का द्योतक है जहाँ हमेशा
बाह्य उपकरणोंको हि सत्य समझा गया है। अब हमे यह सोचना है
कि इस बाह्य मे संतुष्ट जीवों को किसप्रकार सत्य की
और उन्मुख किया जा सकता है। वादविवाद और शब्दजालसे
उत्तर वे कब शुद्ध श्रद्धा के निर्मल सागर मे उतरेंगे, यह तो कहा
नही जा सकता लेकिन आशा की जा सकती है। आखिर उनका
कोई दोष नही है; राजकारण की स्पर्धा मे हि यहा बड़े पैमाने
पे इसलिये श्रद्धा की गंगा सूख गई है। सबको क्षमा कर देना है
सहजयोग है - इशारो ना निकला